

# पथिक

----- समर्पण

## उत्सर्ग

**डरता है क्यों डगर से, खा खौफ मंजिलों का  
पथ ही प्रदीप्त जीवन, मंजिल बनाती मुर्दा ।**

-- उन सब पथिकों को जो जीवन के तमाम उतार चढ़ाव के बावजूद पथ  
पर गतिशील हैं ।

## निवेदन

सृजन केवल ईश्वर या ईश्वर अनुभूति सम्पन्न सिद्ध पुरुष ही कर सकते हैं, बाकी सब तो सुनी, पढ़ी, या सोची हुई बातों की पुनरावृत्ति ही करते हैं।

लेखन के माध्यम से लेखक के मन में उमड़ घुमड़ रहे विचार क्रमशः अधिक स्पष्ट रूप से स्वयं उसके समक्ष उजागर होते हैं। इसी कारण लेखन कार्य द्वारा वास्तविक लाभ लेखक को ही होता है; पाठकों को आनन्द मिलना हमेशा अतिरिक्त लाभ होता है।

प्रस्तुत संकलन भी लेखक का अपने विचारों को अधिक स्पष्ट तौर पर देखने का प्रयास है। प्रस्तुत संकलन में परिवेशित कुछ विचार मौन से, और कुछ विचार शब्दों से जन्म लिए हैं, इसीलिए इन्हें कृत्रिम तौर पर प्रचलित छन्दों में बाँधने का प्रयास नहीं किया गया है। आशा है कि पाठकगण इस संकलन को काव्य रचना कम, विचार संकलन के रूप में अधिक ग्रहण करेंगे।

--- समर्पण

## विषय सूची

कारीगर और लोहा	...
शान्ति	...
भस्मासुर	...
कुपित कृष्ण	...
आधार	...
खोज	...
वन्दना	...
क्षमा	””
मित्र	””
मृत्यु जीवन संवाद	...
बृहन्नला	...
पथिक	””

## कारीगर और लोहा

एक अकेला, धीर, कुशल  
था बस्ती का कारीगर  
जिसके हाथों पड़ता ज्यों  
शीशा, लोहा या सोना  
जाते सबके रूप बदल।  
कारीगर वह धीर कुशल।

लौह पिण्ड को देने रूप  
देता चोट हथौड़े की;  
खिल चिनगारी, गूँज छिटकती  
फिर लोहे को तपा-तपा  
देता घना घन प्रहार।

लौह कराहा एक बार:  
मालिक मेरे,  
हाथों तेरे हूँ लाचार।  
बोलो पर, क्यों, मुझ पर ही  
होता ऐसा अत्याचार?  
शीशे को तुम देते फूँ  
सोने को सहलाते हो  
पर जला मुझे, फिर पीट पीट,  
क्यों ऐसे तड़पाते हो?  
मालिक मेरे वाह, वाह!  
करते क्यों हो पक्षपात।

लौह लौह की टक्कर में,  
अंगार खिलेंगे कदम-कदम  
धनुष राम का टंकारेगा।

सारी बस्ती का कारीगर  
बोला लोहे से हँसकर:  
तुमसे पहले कितनों ने ही  
प्रश्न पुराना यह पूछा।  
इसमें तेरा ना कोई दोष,  
ना तुझ पर है मेरा रोष।  
बुद्धू मेरे, भोले, प्यारे!  
लोहे से फौलाद बनाने  
दर्द तुझे मैं देता हूँ।  
पर, तुझसा ना कोई प्यारा,  
सुन्दर शीशा, सोना न्यारा।

कारण भी सुन।  
वीर्यहीन यह दुर्बल शीशा,  
है बस ऐंठन ही ऐंठन।  
शोभा-सज्जा घर की बन यह  
इठलाता है, जगमग करता  
ठोकर हल्की लगते ही पर  
हो जाता है चूर चूर।  
टुकड़े इसके नहीं काम के  
पर, चुभ पैरों में सबके  
रक्त बहाते हैं यूँ ही।

रक्तपिपासु, दंभी सोना  
अहं, स्वार्थ की मूरत है  
अपने कारण लोगों को जो

बोलो कैसा कसूर मेरा  
लंघन किया नहीं मैंने जब  
लौह-धर्म की लक्ष्मण रेखा?  
क्या मैं कोई अति दुष्ट,  
जिस कारण हो मुझसे रुष्ट  
मुझे पीटते जला-जला?

लूटता, लुटवाता है।  
बंद तिजोरी में यह सोता  
या तन पर है बैठा रहता,  
कारण इसके बार-बार  
धरती हरित हुई है लाल।

देखो निज को।  
तुम बनते हो हल, कुदाल,  
पहिया बनते, खंभ, ढाल,  
बनते तोप, तीर, तलवार।  
तुम से माटी ऊर्वर बनती  
अचल सचल बनाते हो,  
करते रक्षा शीत, ताप से  
दुर्बल सबल बनाते हो।  
कितनी बात कहूँ, इतने में  
गाथा तेरी पूरी है,  
बिन तेरे यह धरती सारी  
आधी और अधूरी है।

कहते हैं तबसे लौह-हृदय  
शोर मचाता हँस-हँसकर  
परहित अपना जीवन देता  
ताप-चोट की पीड़ा सहकर।

\*\*\*\*\*



# शान्ति

कर लंघन कुंठा, विस्तार  
चल शोक, हर्ष के शिखर पार  
पथ यही, दिशा, पाथेय तुम्हरा  
मंजिल यही, यह गेह तुम्हारा।

पथ मध्य पड़े पग तले सुमन  
बहे रक्त थे मृदुल अंग,  
कहाँ चमन में रहे रंग  
कुंद मात्र रह गये कंट।

हुए पार जब गम गिरान  
खिंचे कदम जब आस चढ़ान  
किस व्यक्ति, वस्तु में दम  
तुझे चढ़ाये भाव खम्भ?

कर भ्रू दमन, धर हास रुदन  
शब्दहीन अब कर वर्षण  
कृपणहीन, निश्छल आनन्द।

पथ यही, दिशा, पाथेय तुम्हरा  
मंजिल यही, यह गेह तुम्हारा।

\*\*\*\*



# भस्मासुर

१.

## बालक

धूल कहाँ से इतनी उड़ती  
राख हवा में उड़ती क्यों?  
कहो कहानी इसकी क्या माँ  
वायु इतनी दूषित क्यों?

## माँ

सुनो कहानी उन जीवन की  
जिस कारण से वायु दूषित  
कारण जिनके खुशियाँ कलुषित ।  
खातिर औरों के जीकर ही  
मानव बनता मानव श्रेष्ठ  
वर्ना बनता दानव एक ।  
दुख, दैन्य, विपत्ति इनसे ही  
महासमर, आतंक इन्हीं से  
पीड़ा, आँसू भेंट इन्हीं की ।  
धीरज धरकर सुनो कहानी  
कैसे मानव बनता दानव  
और वहाँ से भस्मासुर ।

२.

## माता

अंग लपेटे हरित वसन  
बूटे झिलमिल रंग-रंग  
नील वर्ण तन ओढ़े चुनरी  
औंधी लेटी औंधाई

जड़-जंगम की जननी ।

सुन कोलाहल धमा-धमा-धम  
धावित पग की धम-धम-धम-धम  
बिखरे लय की डम-डम-डम-डम  
उठ बैठी वह अकुलाई  
जड़-जंगम की जननी ।

प्राण बचा शिव भाग रहे  
दम रोके प्राणी काँप रहे  
आतंक भरा नभ डोल रहा  
देख दृश्य यह भरमाई  
जड़-जंगम की जननी।

लोकपति का कैसा हाल  
वसन बिखरते, बिखरे बाल  
ताल-सृजक ही यूँ बेताल!  
पीड़ित हो वह कुम्हलाई  
जड़-जंगम की जननी।

कंपित काया, वाणी, मन से  
पूछा उसने वृद्ध वृक्ष से  
'कैसा यह उत्पात नया?  
भोले शिव क्यों भाग रहे,  
अचल-सचल में क्यों यह त्रास?'

## वृक्ष

करुण कथा क्या बोलूँ माते  
एक तरुण के जीवन की  
होने वाला जिसका नाश ।  
युग-युग से हैं देख रहे

हम एक कहानी मानव की  
झटक-झटक कर चढ़ता चोटी  
और फिसल कर गिरता फिर ।  
अंध-दृष्टि से मारा फिरता  
धरने कर में अंध निशा  
प्यास बुझाने कंठ देश की  
पीता गट-गट जल खारा ।

### पृथ्वी

दर्द यही ले दिल में बैठी  
किसे कहूँ मैं, कौन सुनेगा?  
अबकी आँधी कौन चली, पर,  
किस चोटी से कौन गिरेगा?

### वृक्ष

बरसों से मैं देख रहा था  
निशा उदय से निशा उदय तक  
नदी किनारे खुद में खोए  
युवा एक जो चाहत-मूरत ।  
मूक सही, पर मूर्ख नहीं  
स्थविर हूँ, मैं ठूँठ नहीं  
गतिहीन, हाँ क्रियाहीन  
नहीं कदापि वेदनहीन ।  
टहनी, पत्ते गिरा-गिरा नित  
मूर्ख तरुण को किया इशारा  
'थम जा मूरख, थम जा रे  
धर लगाम चाहत अश्वों का।'  
पर सुननेवाला कौन यहाँ था!  
सुनो कथा उस मूरख मन की ।

### तरुण

घायल मन से रिसती पीड़ा

निर्बलता की, निर्भरता की  
कोटि-कोटि तन-लोम कूप में  
आग धधकती वंध्यापन की ।  
वध्य पशु सा मरते जीते  
रगड़-रगड़ सर माटी में,  
सुख-चैन भला क्या पाते सब  
तिल-तिल मरकर जीवन में?  
बल धन का हो या भुज का हो  
मानव इससे मानव बनता  
निर्बल, दुर्बल और अकिंचन  
ये तो हैं बस कीट-फतिंगा ।  
पग तल जिसके धरती डगमग  
रक्त-नयन में अग्निवाण  
सम्मुख जिसके हर मानव नत  
जग बस माने उसे महान ।  
शक्ति, शक्ति, हाँ शक्ति अतुल  
चाहत मेरी शक्ति अतुल,  
शौर्य, वीर्य औ' बल-विक्रम  
वैभव, संपद मिले विपुल ।  
कहती थी माता, 'मत जा बेटा ।  
मृग-मरीचिका बल की इच्छा  
अंध-काम का कर दे त्याग  
तोष-धर्म ही जग में अच्छा ।'  
'बाहुबली ही जल जाता है'  
कहती थी वह बार-बार  
रोज-रोज पर वीर्यविहीन  
मरता ना क्या सौ-सौ बार?  
कहती थी अज्ञान-धर्म से  
बल-वैभव की होती चाहत,  
कौन काम का जीवन वह  
पिस जाता जो पग-पग पर?  
नहीं चाहता ऐसा जीवन  
नहीं चाहता रीता ज्ञान  
भय से मेरे भू-नभ काँपे  
बरसे भू से अग्निवाण ।

खुशी करूँगा भोले शिव को  
तपा-तपा कर निज तन, मन  
हुआ मंत्र यह आज हमारा  
अतुलित बल या देह पतन ।

३.

### बालक

मूक बनी माँ क्यों तू बैठी  
कहती क्यों ना आगे की?

### माँ

व्यथा भरी गाथा आगे की  
वाणी थम-थम जाती मेरी  
फिसल पड़ें ना आँसू तेरे  
नयन-नीड़ से अनजाने ही ।  
जप-तप-श्रम कर ऋषि, मुनि  
करते पावन निज तन-मन  
कामी लोभी और घमंडी  
लाते निज पर विपद गहन ।

कर तप पाया उसने वर  
रखे हाथ वह जिसके सर  
बन भस्म गिरे, वह चूर-चूर  
कहलाया वह भस्मासुर ।  
धरना चाहा शप्त हस्त अब  
भरे दर्प, वह हित-साधक सर  
प्राण बचाकर भागे भोले  
पुण्य असुर के हुए दग्ध अब ।

मोह कहो, या कह लो माया

हाल बने कुछ अजब-गजब  
रखा हाथ वह खुद के सर!  
धधकी काया, केश, अंग  
चीख उठा अब भर आतंक  
भस्मित होता भस्मासुर ।

### भस्मासुर

यह क्या हो रहा भगवान!  
नाश, नाश, यह महानाश ।  
नहीं त्रास केवल मृत्यु का  
घोर ताप इस ज्वाला का  
तिल-तिल जलने की पीड़ा  
कण-कण तन-मन फटने का ।  
लोम तनिक सा जलते ही  
हर प्राणी उठता चीख चीख  
जलता मेरा तन मन सारा  
माँगू किससे त्राण-भीख?  
क्यों मूक, बधिर बना संसार  
सुनता ना क्यों आर्तनाद?  
पीड़ा अकुलित अंग-अंग  
दे त्राण मुझे हे प्राणनाथ!

कैलाशपति, कैलाशपति!  
जगतपति का देकर वर  
क्यों बना रहे हो राखपति?

### माता

देख अवस्था भस्मासुर की  
प्रकट हुए कैलाशपति  
देख इष्ट को चीखा क्रोधित  
भस्मित होता भस्मासुर ।

### भस्मासुर

बोल स्वयंभू! क्यों वर तेरा  
मुझपर यह अभिशाप बना  
सात सुरों के सरगम बदले  
ध्वंसनाद क्यों ध्वनित किया?  
ना देना था ना देते, क्यों  
हाथों तेरे ठगा गया?  
नगर दिखा आशा-दर्पण में  
प्रतिभासित को सत्य कहा?  
तद्रूप तुझमें तन, मन पर क्यों  
तांडव तेरा नाच हुआ?  
खुद मेरे हाथों क्यों मेरा  
प्रलय प्रखर प्रक्षिप्त हुआ?

### शिव

सुन रे अधम, असुर भस्मासुरः  
वर, मूर्ख! हमारा वर ही रहता  
पर कारण तेरे ही तुझपर  
वर मेरा अभिशाप बना ।  
रौनेवाला जग में तुझसा  
दोष ढूँढता औरों में  
गले लगा आपद-संपद को  
आस खोजता आँसू में ।  
तेरे ही पाषाण हृदय ने  
तेरे मन का नाश किया  
नहीं और के कारण पर तू  
खुद ही भस्मीभूत हुआ ।

### भस्मासुर

करी साधना अरसों-बरसों  
सही पिपासा तन-मन की  
उष्मा सहकर ऊर्मित उर की  
पल-पल तेरी पूजा की ।

कब खिली ऋतु, कब बादल रोया  
सोया सूरज, निशा बुझी  
कब माह गया, कब बरस गया  
ओले आये, आँधी आई  
अनजाने इन आवगमन के  
पल-पल तेरी पूजा की ।

जग के स्वप्निल तज सुख सारे  
किया ध्वनित मैं 'तुम्हीं, तुम्हीं'  
तोड़े नाते, छोड़े रिश्ते  
आगा-पाछा ना सोचे ही  
बस तुझसे वर पाने ईप्सित  
पल-पल तेरी पूजा की ।

क्या हाल बनाया शरणागत का!

### शिव

अरे अधम, दानव, भस्मासुर  
कर बंद तुम्हारा यह प्रलाप ।  
था इष्ट नहीं मैं कभी तुम्हारा  
पूजन की ना तूने मेरी,  
स्वार्थसिद्धि था इष्ट तुम्हारा  
दर्प, अहं ही पूजा तेरी ।  
सोपान बनाया तूने मुझको  
स्वार्थसिद्धि की मंजिल का  
पग पहुँचे मंजिल ज्यों ही तेरे  
निज आश्रय को ठेल दिया ।

इसीलिए तेरा यह हाल  
फँसा आज निज कर्मजाल ।

### भस्मासुर

त्याग, तपस्या, तर्पण तुझको  
तन-मन-प्राण समर्पित तुझको  
की मैंने थी भर आशा से  
पाने माँगा मुँह वरदान ।

क्या चाहा था बोलो मैंने?  
मेरी चाहत वही रही थी  
जिसे चाहता हर इंसान  
शक्ति संचय, निज पहचान ।  
देखो क्या पर हाल बनाया !  
आवश्यकता ही नहीं रही  
मेरी चिता सजाने की  
रहा धूल-ढेर अनजान ।

पड़े रहे सब परिजन मेरे  
रहा पड़ा अस्त्रों की शान  
बिन जाने वे यह भी कि  
मैं कहाँ गिरा, मैं कहाँ मरा,  
क्यों भला, कब, कैसे मरा ।  
बोलो कैसे पूजित होगे  
ठोकर देकर आश्रित को?

### शिव

लोभ, मोह के प्रबल बेग बह  
हर जन चाहे ऐसा वर  
रहे बनी उसकी ही दुनिया  
बाकी का हो वास रसातल ।

सुन रे अधम, असुर भस्मासुर :  
हूँ विश्व-व्याप्त मैं विश्वनाथ  
हूँ जीव जगत का मैं ही प्रेम  
हृदय-हृदय का हूँ मैं वासी  
बुद्धि, विवेक, हूँ मन भी मैं ।

कर मर्यादित अहं स्वयं का

और समेटे लोभ, मोह  
बनता जग में तू महान ।  
अंध मोह के वश में आ पर  
करना चाहा विश्व-दमन  
भस्मित कर निज अन्तर्मन ।

जिस व्यक्ति का दग्ध हुआ  
बुद्धि की टोही आवाज  
व्यर्थ धरा पर जीवन उनका  
ऐसों पर ही गिरती गाज ।

### भस्मासुर

हो धरे जाहनवी जटाजूट  
है कंठ तुम्हारे कालकूट  
कर दे वर्षण अमृतधारा  
वेग रोक हलाहल घूँट ।

शशी सुशोभित सर है तेरे  
गले धरे हो विषधर व्याल  
चपल चाँदनी चमका दे फिर  
वापस लेकर दंश विशाल ।  
ब्रह्मनाद नादित डमरू से  
करते तुम सृष्टि, संहार  
नाश करो ना जीवन मेरा  
दे-दे वापस प्राण-वास ।

हे स्वयंभू, भोलेनाथ  
कर क्षमा, दया, दे जीवनदान ।

## शिव

हुआ अपराध महत है तुझसे  
पर पछतावा देख तुम्हारा  
नहीं क्रोध अब मेरा तुझपे ।

यह जीवन ना वापस होगा  
कण-कण तेरा भस्म ढेर, पर  
देह धरेगा कोटि-कोटि ।  
जब तक, पर, ना सीखो सीखः  
नहीं जगत बस तेरे खातिर,  
शशी, सूर्य ना तेरा ही  
तब तक जनम-जनम बस यूँ  
रहोगे जलते दग्ध-तप्त,  
रहोगे बनते भस्मासुर ।

## माता

नहीं कहानी शेष यहीं  
होता अब भी रोज-रोज  
इसके उसके सबके साथ ।  
जहाँ प्रेम से प्रेम टूटता  
समझो जन्मा एक असुर  
कह लो उसको भस्मासुर ।  
धर ललक-लपट, हो कामातुर  
करते फिरते जग को भस्म  
ना बनने तक भस्मासुर ।  
सात स्वर्ग का कामी जो  
मन-विवेक जब देता खो  
धूल-राख का बनता ढेर,  
वायु वेग या पवन मंद  
रह-रह देता जिसे बिखेर।

\*\*\*\*

# कुपित कृष्ण

## साक्षी

कुरुक्षेत्र की पावन भूमि  
वाणझड़ी से सिंचित थी,  
रक्तसरोवर धरे कोख वह  
मृत देहों को जनती थी ।

युद्ध नहीं यह हार-जीत का  
नहीं समर सिंहासन का,  
शूर-वीर की, सत्य धर्म की  
कठिन परीक्षा, टक्कर थी ।

मृत्यु-प्रलय पर थिरक रहा था  
नृत्य भीष्म के तांडव का,  
ताल तोड़ने ध्वंसनाद का  
बना काल सा अर्जुन था।

छाया-काया, वज्र-आग सम  
पौत्र-पितामह हो सम्मुख  
महाकाल बन कवलित करने  
इक दूजे का टोहे मुख ।

भावुकता के काले बादल  
विषम पाश बन अर्जुन का,  
तेज हरण कर इन्द्रपुत्र का  
डाला यादों के कारा।

## अर्जुन

बचपन में इनकी गोदी चढ़  
जब कहता था 'मेरे ताता!'  
हँसकर कहते, 'हूँ मैं बेटा,

तात तुम्हारे तात का ।'

जिनकी छाती रोये-सोये  
श्वेत श्मश्रु धर खेले थे;  
कैसे करूँ वह छत्र छिन्न  
पिता, पितामह, त्राता वे।

रे धर्म समर! कह जीवन में  
कठिन परीक्षा लेते क्यों?  
निज से निज को टकराकर क्यों  
चिह्नहीन बनवाते यों।

है बंधु-पराया कोई नहीं  
क्यों बोलो, कहते तुम ऐसा?  
निश्चित ही इस जग में तेरा  
ना अपना है कहने का!

## साक्षी

वाण मचलते लिए हाथ  
लक्ष्य भेदते रहे पार्थ ।  
पर, भीष्म कहाँ, औ तीर कहाँ?  
वह वेग कहाँ? वह तेज कहाँ?

वीर पितामह वीर धीर अति  
देख पौत्र को कंपित थे,  
पर उनके वे प्रलय वाण के  
प्रखर हड़कम्प मचाए थे ।

देख पार्थ को विचलित यूँ तब  
कृष्ण दिए सघन ललकार ।  
काठ बने अर्जुन कानों ने

सुनी नहीं, पर, एक गुहार ।

देख सैन्य का महानाश अब  
कुपित कृष्ण का क्रोध भयंकर  
फूटा यूँ वाणी बनकर ।

### कृष्ण

मोहग्रस्त क्यों तेज तुम्हारा?  
तीक्ष्ण तीर क्यों कुंठित आज?  
धरती धकधक करने वाले  
कदम हुए क्यों कंपित आज?

ना समराँगण, होमकुण्ड यह  
हविषा पावन माँग रहा;  
यज्ञपात्र में तूने क्यों, पर  
धूल भस्मकण भर डाला?

गंगपुत्र का करते अंत  
मन में क्यों यह शोक-ताप?  
कर विदा वीर्य, बल विक्रम ओजस  
गले धरे क्यों यह अवसाद?

काठसंग से जलता कीट,  
अन्नसंग से वह पिसता ।  
साथ अधर्मी का देने पर  
शिष्टों का वध निश्चित होता ।

कवच अभेदा बन अबतक  
दिए भीष्म दुष्टों का साथ;  
आज युद्ध के दावानल में  
बने रहें क्यों वे अपवाद?

मुख धनंजय, मुड़कर देख ।  
देख तुझे ही जीत दिलाने  
व्यर्थ ही कैसे तेरी सेना  
कटी घास का हुई ढेर ।

आती देख घनी विपत्ति  
दौड़ लगाते लँगड़े भी;  
महाकाल के खड़े सामने  
हो क्यों भावुक, मूक, बधिर?

आज त्यागकर आश्रित रक्षा,  
और छोड़ तुम लाज-शरम;  
धर्मवचन धर धरती पर यूँ  
कितने नीच बने हो तुम ।

भूले कृष्णा का वस्त्रहरण,  
भूले दुष्टों का क्रूरचलन,  
भूल गये क्या वे दिन जब  
भटके वन-वन भाईसंग?

गीता का उपदेश हो भूले,  
धर्म, कर्म, उद्देश्य हो भूले,  
आज भूलकर अपने को अब  
रहे नहीं तुम वीर, धुरंधर ।

बृहन्नला बन आज यहाँ;  
बने नपुंसक भीरु, कायर;  
अस्त्र हैं तेरे बिलख रहे, जा  
चूड़ी पहन ले घर जाकर ।

हिजड़ों का यह नाच नहीं,  
युद्ध है वीर, लड़ाकों का  
पग धर घुँघरु, लिपटा साड़ी  
जा, महलों में नाच सिखा ।



ध्यान लगा सुन मेरी बात :  
जग में तुम बस निमित्तमात्र,  
कर पालन कर्त्तव्य-कर्म का  
कृपा नहीं तुम करते जग पर ।

व्यर्थ एक शर होने पर  
तरकश होता ना रिक्त कभी,  
देखो कैसे बिन तेरे ही  
कौरव बनते भस्मित वीर ।

एक अकेला काफी हूँ मैं  
करने जग में दुष्ट दमन,  
चक्र नहीं, देखो चाबुक से  
करता कैसे भीष्म-शमन ।

बचें पितामह आया मैं ।  
देखें कितनी शेष बची अब  
साँस तुम्हारी बाहों में?

साक्षी  
निष्प्राभ करने भीष्मतेज को  
धर कूदे चाबुक मुरलीधर  
भय से जग निस्तब्ध हुआ,  
डगमग डोली धरती थर-थर ।

भीष्म  
प्रभो! तुम्हारा स्वागत, स्वागत!  
शस्त्रहीन मैं, हे करुणाकर,

आज आपके हाथों मर मैं  
होनेवाला धन्य, अमर ।

उठवा निज पर शस्त्र आपसे  
जीवन मेरा धन्य हुआ;  
कर त्रासित मैं आज आपको  
मृषा-वचन, हाँ बना दिया ।

कृष्ण  
गति धर्म की सूक्ष्म, गहन  
होता वह सामान्य, परम  
शिष्टों की रक्षा करना ही  
जग में मेरा परम धर्म ।

कह ले झूठा जग मुझको  
पाप नहीं, पर होगा मुझको:  
परम धर्म को साधित करने  
क्षुद्रवचन मैं तोड़ रहा ।

बाँध बाँधता सिन्धुवेग को  
वचन बाँधता भाववेग धर,  
टूट अगर ये जाएँ कोई  
होता जग में प्रलय भयंकर ।

बचें पितामह, आया मैं ।

\*\*\*\*\*

## आधार

इठलाती मैं सोनपरी।

खुशियाँ छितराती  
थी जग की प्यारी  
अपने सोनमहल में ।

ठिठक थमा था चक्र काल का  
या धावित था चक्राकार  
हो सम्मोहित मन से मेरे  
आकर वह अँगना मोरे ।

कहो खेल यह कर्मों का  
या, मूर्ख मनों की नादानी  
हुआ आक्रमित  
वह महल सुहाना सपनों का ।

फुफकार भरी  
फूत्कार भरी  
झँझा फूटी वेगवती  
मानो एक फणी  
पाने अपनी मुकुटमणि  
चोट चोट पर करता चोट  
क्रोधित, कुंठित  
फण सहस्र धर  
सम्मुख हर बाधा पर ।

या अनजाने  
शेषनाग ने करवट ली।

अस्थिर आधार  
कम्पित दीवार

टूट गिरी छत  
सर ऊपर।

गहन तमस की आगोशी  
चेतनता की खमोशी  
पूरब पश्चिम एक बना  
शेष रहा था बस अब  
साँसों से बहती बदहोशी ।

फँसा काल का चक्र पंक अब  
या धीमा पर धीमा हावी  
पीड़ित विगलित  
देख दृश्य वह दुखदायी ।

कंगाली में आटा गीला,  
फटी सिलायी मेघों की, हा!  
हो अचम्भित  
'मैं'पन भी वीरान हुआ ।

प्रियतम मेरे!  
ना जानूँ मैं क्यों तूने  
ज्योत आस की प्रेषण की  
अप्रत्याशित  
मुझ तक मेरे मलबे बीच ।

आज नहीं मैं सोनपरी  
रहा नहीं वह रंगमहल;  
पर बालू की भीत नहीं अब  
छपरी भी ना कच्ची सी।  
प्रियतम मेरे, मेरे प्यारे  
तुम्ही भीत अब,  
छत भी तुम ही ।

\*\*\*\*

# खोज

घना धुंध था  
फिसलन भी  
एक अकेला मैं खोया  
जीवन के लम्बे पथ पर ।

खमोशी थी  
तन्हा भी  
यादों में सिहरन अनजाने ही  
ढूँढ़ तुझे रहा था  
चप्पा चप्पा छूकर।

नासमझी थी  
बदहोशी भी  
छोड़ रहा था छू छू  
मील मील का पत्थर ।

दुनिया छूटी  
खुशबू छूटे  
सपने टूटे, अपने रूठे  
पाया तुमको तब जाकर ।

\*\*\*\*\*

## क्षमा याचना

हे भगवन!  
कर सृष्टि दुनिया की  
निश्चित तूने गलती की  
इसीलिये तो बार-बार  
आते करने जग उद्धार  
पर बनाता तुम्हें शिकार  
तेरी सृष्टि -- यह संसार ।

हुए अकारण कूस बिद्ध  
जन्म लिए हा! कारा बीच  
भटके वन-वन चौदह वर्ष  
और बने तुम पशु अर्द्ध,  
मत्स्य, कूर्म तथा शूकर  
माँगे भिक्षा घूम घर घर ।

की गलती बड़ी इतनी  
जग में पर हो पूजित – मानित;  
करो कृपा बदले बस इतनी  
अनदेख करो सब नादानी  
करते रहते हम जिन्हें  
जान बूझ या अनजाने ही।

\*\*\*\*

## मित्र

घनघोर घटा की छाया में  
था खोया जब साया मेरा  
ज्योतिपुंज की आभा बनकर  
तुमने ही तो दिखलाया पथ ।

खैसे कहूँ, मैं आभारी हूँ  
जब जीवन का श्रेय तुम्हीं को  
कैसे कहूँ ऋण चुकता दूँगा  
जब मन, प्राण समर्पित तुझको ।

\*\*\*\*

## रामकृष्ण अवतार

रामकृष्ण जय रामकृष्ण जय रामकृष्ण भगवान्  
रामकृष्ण जय रामकृष्ण जय रामकृष्ण शुभनाम ।  
जय जय रामकृष्ण भगवान्, जय जय रामकृष्ण शुभनाम॥

ज्ञान शक्ति बल वीर्य तेज भर  
निराकार ही नाम रूप धर  
धरानिवासी धरणीधर्ता  
धन्य धन्य अहा! मानव लीला।

तज चक्र गदा, तज शूल पाश  
धर भक्ति पद्म, धर भस्म त्याग  
धर ज्ञान शंख, धर ब्रह्म-नाद  
अहा! विष्णु सदाशिव साथ-साथ।

ह्रीं ॐ हरि शिव काली श्याम  
श्री बुद्ध मुहम्मद सीता राम  
ऋतं धर्म प्रभु निर्गुण गुणमय  
शक्ति ब्रह्म अहा! रामकृष्ण जय।

रामकृष्ण जय रामकृष्ण जय रामकृष्ण भगवान्  
रामकृष्ण जय रामकृष्ण जय रामकृष्ण शुभनाम ।  
जय जय रामकृष्ण भगवान्, जय जय रामकृष्ण शुभनाम॥

\*\*\*\*



## वन्दना

हे दीन शरण, प्रभु क्लेश हरण।

हे पद्म नयन, चिरहास वदन  
हे वेद वचन, प्रभु प्राण-पवन  
हे प्रेम सघन, प्रभु ताप थमन  
हे दीन शरण, प्रभु क्लेश हरण।

तव युगल चरण, प्रभु शीश नमन  
थम पतन सघन, थम नीच गमन  
हो हृदय गगन प्रभु नाम भजन  
अविराम जपन, प्रभु रूप रमण।

हे दीन शरण, प्रभु क्लेश हरण।

\*\*\*\*\*

## मृत्यु-जीवन संवाद

मौत-निशा की धीमी आहट  
मर्त्यलोक में उठी खड़क,  
प्राण-पटों पर यम ने कुछ के  
हौले-हौले दी दस्तक।

शीर्ण पर्ण बन प्राण देह के  
होने आए पृथक खंड,  
निश्चेष्ट नयन, निस्पंद अंग  
ध्वनित नहीं अब रहे कंठ।

मन ही श्रोता, मन ही वक्ता  
देख अतिथि इक अनचीन्हा,  
उत्कंठित वे पूछ उठे,  
'कौन? कहाँ से? क्यों आये?'

बोले धीरे, धीरे अतिथि,  
'हूँ मैं मौत। काल सबग्रासी।  
सब कहते यम; मैं सर्वान्तक भी।'

सिमटे-सिकुड़े थे जो प्राण,  
अंत-वचन उन ऐसे मन के  
निकले अब कुछ ऐसे-ऐसे।

### आदिम मन

शरबिद्ध पशु-सा आतंकित  
थर्राया वह बर्बर थर-थर  
आंधी में सूखे पत्ते सा  
काँप-काँप वह काँप उठा।

भय से भींगे-भींग उठे

केश, कपाल, तन बेहाल,  
लोम खड़े थे, सप्तम सुर में  
चीखा, करते आर्त्त पुकार,  
'बाप रे बाप।

कैसा है यम विकट, कराल  
देता भीति, भय विशाल।

'खाया, पीया, सोया, दौड़ा,  
था बस ऐसी मस्ती में;  
देखो झपट रहा क्यों यह  
मुझे बाँधने रस्सी में?  
दौड़ो, दौड़ो, मेरे बन्धु,  
मेरे भाई, मुझे बचा।

'देखो कैसे सोख रहा  
मेरे तन से मेरे प्राण,  
होश-हवास है उड़ता मेरा  
और सूखता मेरा ज्ञान।  
जाऊँ, भागूँ, छिपूँ कहाँ मैं  
मुझे बचा रे मुझे बचा।  
खींच रहा रे खींच रहा  
यम देखो कैसे खींच रहा,  
टूट रहा रे टूट रहा  
जीवन-धागा टूट रहा।  
मेरे बन्धु, मेरे भ्राता  
मुझे बचा, भाई मुझे बचा,  
पाँव पड़ूँ मैं सबके तेरे  
मुझे बचा रे मुझे बचा।'

जीवन-ईप्सा जिसका जीवन  
रहे नहीं अब उसके प्राण

गया, खींचा बन पशु सा आदिम  
पाकर ना पर कोई त्राण ।

### आम-जन

पढ़ा-लिखा, जन साधारण  
बोला करते रोते-क्रन्दन,  
'आ गए तुम हा । हे यम,  
देने हमको दुख भीषण ।

'सुना जन्म से मैंने सच था  
यहाँ, धरा पर तुम ही सच हो;  
नहीं सोचा, माना था, पर  
इतनी जल्दी तुम आओगे ।

'क्या होगा मेरी हिरणी का?  
क्या होगा मेरे छौनों का?  
थे पग धरते ना बिन मेरे  
ये अबोध, अबूझ, अनाथ ।

'दिये थे फेरे सात सात  
चलने जीवन में साथ-साथ;  
अनाहूत, तुम आ जीवन में  
लिए बाँध चल अपने साथ ।

'क्यों आया, क्यों चला अचानक  
बना बोझ, क्यों बोझ उठाया ?  
मृत्यु! , जीवन हाय! हमारे  
नहीं समझ में कुछ भी आया

'आती सिसकी, आता रोना,  
नादानों की सोच बात;  
विदा, विदा ओ हिरणी मेरी

छोड़ा बच्चों को तेरे हाथ ।'

### काम-पुजारी

उद्दाम काम का मत्त पुजारी  
मधुर पान ही पूजा जिसकी,  
पूजा-प्रतिमा कमल, केतकी,  
मद, मकरंद, मधु सामग्री ।  
थके, हारे वह बोला भोगी :

'रही माधवी, यह मधुवन,  
रहे भ्रमर ये करते गुंजन  
इन कलियों का करने चुंबन ।  
पर, यम, तुम चले मुझे ले !

'उषा, निशा की सोच हमारी  
"पान करूँगा मधु अकेला;  
खा गूदा, गुठली छोड़ूँगा  
रसिकों को रसालों का ।"

'शिथिल, मत्त हो अंग हमारे  
थक हटते थे पीछे सारे  
कूप-कूप हो पूर्ण-पूर्ण, पर  
मन रहता था प्यासा-प्यासा ।

'रहे तमाशे भर बाजार  
रही रंगीनी भर आकाश  
रहे खिलौने और खिलाड़ी  
छूटा बस सब मुझसे ही ।

### आत्महन्ता

जीवन-पथ का एक पथिक  
जग से हुआ निराश,  
हत्या अपनी कर बैठा

जब था थका, हताश ।

बोला, 'यम बेसब्री से  
इंतजार था तेरा ही  
खुशियाँ मेरी जब भर आई  
काँटे औ पत्थर से ।

'माला गुँथा जीवन का मैं  
पिरो-पिरोकर सपने ढेर ।  
टूटी माला, बिखरे सपने  
बचा आँसू का बोझिल ढेर ।

'आनन्द घना, सत, या चित ही  
देता जीवन को जीवन  
पर, मेरे या औरों कारण  
वीरान हुआ मेरा जीवन ।  
जीवन से ना जब कुछ पाना  
नहीं शून्य ही, नकार भी  
शूल सी यादें पंखुर मन पर  
ऐसे जीवन से मौत भली ।

'नही पता, पथ गलत, सही  
या चुनी मुसीबत अल्प, अधिक;  
पर है यह अब निश्चित कि,  
खुश हूँ मैं अत्यन्त अधिक ।'

### कवि

नहीं क्रान्तदशी, पर, था  
हाँ, वह एक कवि ।

कहा विरत, 'आओ यम ।  
कविता मैंने तुम पर  
लिखी कितनी ही,

साथ में जीवन पर,  
जो है तेरा भाई ।

'पाया मैंने बहुत  
खोया भी कम नहीं,  
पर खुशी नहीं  
गम भी नहीं  
चाहत बस इतनी कि  
छपती रहे रचना हमारी ।  
कवियों के नाम में  
आए बारी मेरी भी  
कहें सब, "शान से रहा कवि ।  
जीता रहा कविता में,  
मरा कविता में ही ।"

### विजेता

शायद बाबर या सिकन्दर,  
चंगेज कहो या नादिरशाह  
बोला यम से सुर कठोर धर,

'ले खड्ग, निषंग, तोप, तलवार  
कितनों को पहुँचाया मैंने  
निष्प्राण बनाकर तेरे द्वार ।

'आतंक मुझे ना तुझसे कोई  
तुम तो हो मेरे प्रतिरूप,  
मेरे ही सौतेले भाई ।

'पर बोलो क्या तेरे द्वार  
मिलेंगे मुझको वे सारे  
उजाड़ा जिनको मार-मार?

"निर्बल को क्यों मारा था?"

क्या बींधेंगे इन प्रश्नों से,  
"क्यों अबला को सताया था?"

'कहीं आक्रमण नहीं करें वे ।  
मैं अकेला, दीन, सैन्य बिन  
और बिना हूँ खड्ग, ढाल के ।

'नहीं जगत तजने की दुविधा,  
पर उत्सुक मन पूछे मेरा  
उत्तर इन सब प्रश्नों का?'

### दर्शन-विज्ञान-पंडित

विज्ञान-पुजारी, दर्शन-पंडित  
था धरा पर पूजित, मानित ।  
बोला वह गंभीर, धीर  
'नहीं चाह थी जीवन से  
नहीं चाह, मृत्यु, तुझसे ।

'कितना कुछ जीवन से पाया  
कितना सीखा और सिखाया;  
सच है, पर, कि जीवन मेरे  
नहीं समझ तू कुछ भी आया ।

'टटोले मैंने तारक गर्भ  
गिने जीवाणु अर्ब, खर्ब;  
कितने दर्शन के चर्क-वर्क  
क्षुद्र किए मैंने ही गर्व ।

'रहा सीखता और सिखाता  
रहा पढ़ाता और सुनाता  
पर, जीवन वृथा मेरा  
लिख, पढ़ सारे पुस्तक को ।

'रक्त-पिपासु लेखनी मेरी  
ली हरित तरु बलिदान;

जाना मैंने जग, जीवन को  
रहकर, पर, खुद से अनजान ।"

### साधक

अध्यात्म मार्ग का साधक एक  
गिनता साँसे धीरे-धीरे,  
कहा मौत से, तारक मेरे,  
चलता हूँ मैं खुशी-खुशी  
मेरे प्यारे, साथ तुम्हारे ।

'मैंने जाना है, समझा है  
कुछ-कुछ राज यहाँ तुम्हारा,  
एक निरंतर धारा चलती,  
आदि, अंत ना जीवन का ।

'नहीं अंत तुम करते धारा ।  
पर इक धारा से पहुँचाते  
नई एक बहती धारा में  
भरने अनुभव नए-नए ।

'तुम कपाट अगले जीवन का  
जहाँ मिलेगी काया ताजी  
आगे बढ़ने का अपने पथ  
पाने फिर से शक्ति नई ।

'जीवन-अलात नहीं रुकेगा  
चेतन से चेतन मिलने तक,  
जीवन देता सीख रहेगा  
बने बूँद ना सागर जब तक ।

'मन, बुद्धि, अहं का पिंजर  
ध्वस्त नहीं हो जाता जब तक,  
आना-जाना लगा रहेगा

ऊपर-नीचे, धरणी तल ।

'भर आशा से कहता मैं  
ले चलो मुझे तुम अपने साथ ।

आत्मज्ञानी  
ईसा, मूसा, या सुकरात  
-सा था ज्ञानी जो साक्षात  
हँसे ठठा सुन यम संवाद,

'बातें तेरी बस बकवास ।  
सुन यम ! जीवन खेल एक  
जहाँ नहीं तुम खुद आजाद ।

'रोते, हँसते, खेल खेलते  
जग के बालक ये जो सारे,  
धरे मुखौटा तुम भी ऐसे  
साथ खेल में इनके देते ।  
डर, भय, उनको दे तू भभकी

धी, मन, काया, अहं, बचन से  
जोड़ रहे जो अपने नाते ।

'रोना-हँसना, गिरना-उठना  
जो अतीत है इन द्वन्द्वों से,  
पाना-खोना, लेना-देना  
नहीं जहाँ है जिसके जग से;  
तजना जग को? डर-भय तुमसे  
बातें ऐसी ना सोचेगा;  
जीवन को जीता है जिसने  
नहीं मौत से घबरायेगा?

हूँ बुद्धि नहीं, नहीं अहं भी  
नहीं देह, ना मन भी मैं,  
था कल, आज, रहूँगा कल भी  
मुझमें जग है, मैं हूँ जग में ।'

\*\*\*\*

## बृहन्नला

बृहन्नला --  
मर्दों बीच  
एक निहत्था हिजड़ा  
या नपुंसक बीच  
मर्द एक मात्र ।

ईसा, गाँधी, या सुकरात  
और अनेकों साथ  
थी यही इक बात ।

स्वर्ग की सीढ़ी गुजरती  
नर्क मध्य से,  
बनते धरा पर मर्द वही  
मानते सब जिन्हें  
बृहन्नला क्लीब एक ।

\*\*\*\*

# पथिक

## श्रम

### द्रष्टा

नीरव, निश्चल, नभ श्यामल जब  
सूरज तन्द्रल अरुणाचल,  
उड़ा विहग उन्मुक्त गगन जब  
जड़, जंगम था निद्रा बोझल।

तज तल्प तपन निज आँगन का  
चल पड़ा पसारे उष्म प्रभा;  
भर तेज, तपिश, किरणों में शक्ति  
तय करने दिन भर की दूरी।  
नजर उठा पथ देखा मात्र ही  
तारकहन्ता तमक उठा;  
था उड़ता इक नन्हा पंछी  
देता मानो उसे चुनौती।

### सूरज

जग में जन्मा कौन, कहाँ  
चल सके हमारे वेग समान?  
ठहर, ठहर, रे पाखी ढीठ!  
रोज-रोज तुम हार-हार  
सीख नहीं सके हो सीख।  
देखो कैसे आज, यहाँ,  
होती मेरी फिर से जीत।

### द्रष्टा

उठा तमतमा मार्तंड महा,  
निःश्वास गर्म, निःशब्द कदम,  
प्रतिपक्षी को देने मात

प्रतियोगी ज्यों साधे दम।

गति विहग की धीर, अक्लांत  
नीरव, मन्थर, धीमी, शांत।

लगते थे वे मानो जैसे  
मिलकर दोनों आगे पीछे  
चीर रहे हों नीली छतरी  
जोत रहे हों नभ का खेत।

भरी दुपहरी, जलती गरमी।  
तेज तपन का रहा चूसता  
धरावक्ष का शीतल रस।  
बनी बिचारी आग पोटली,  
जलती साँसों से विह्वल;  
वसन छोड़ द्रुम, घास, गुल्म का  
माँग रही थी नभ से जल।

सर ऊपर से आगे निकला  
दर्पित जीत मनाते त्वष्टा।  
पर जिद्दी बालक सा मानो  
उसने अबतक ना सीखा था  
पड़ने पर जयमाल गले में  
विनीत, उदार हो मृदु बनना।  
बिना कमाए तेज, त्वरण वह  
रहा जलाता, रहा तपाता।

विहग बिचारा!

उड़ता रहा, बढ़ता रहा



जलता रहा, तपता रहा  
धरत 'धर्जौ' से ।

ना जाने पर निर्मम तापकः  
लक्ष्यभेद की ईप्सा जिनमें  
डरते ना वे शोक-ताप से;  
मिले हार या हार गले में  
कदम कभी ना उनके डिगते ।

बिन जाने आगाम विपत्ति  
रहा गगन में उड़ता पंछी ।

### प्रेरणा

#### द्रष्टा

नहीं विहंगम सधारण,  
था नीर-क्षीर विवेकी हंस ।  
दूर देश से उड़ता आया  
शुभ्र, धवल पंखोंवाला,  
श्रद्धा, शक्ति भरे प्राण में  
सीधा-साधा, युवा-युवा ।

थे इसके भी पिता-पितामह  
भगिनी, माता, बंधु, भ्राता ।  
कुंजित, शोभित, सरस, सुवासित  
जग को उसने छू देखा था ।

छोड़ इन्हें वह उड़ निकला था  
खोज में अपने सच्चे घर का;

बचपन से ही बार-बार  
सुनता आया जिसकी बात ।

सच्चा घर? हाँ, सच्चा घर ।  
नन्हेंपन से संग मिला था  
हंस परम इक बूढ़े का  
जिसने इसको बतलाया था:  
'दूर, हिमालय पिछवाड़े में  
शीतल, सुन्दर, स्वच्छ सरोवर  
है हम सबका सच्चा घर ।'

#### नन्हा हंसक

फिर ना चलते क्यों हमसब  
वापस अपने देश?

#### हंसराज

देखो अपने हंसों का दल;  
मुझे समझते बौड़म, पागल ।  
चारा अपना चुगने में पर,  
रहते दिनभर व्यस्त, विकल ।  
देखो इस उस्ताद हंस को -  
क्षितिज पार हंसी, हंसक के  
बद्ध हैं इसके कान, आँख  
बिद्ध हैं इसके पंख, पाँव ।  
करते आशा क्या इनसे जो  
जन्म-मरण का जीवन जीते?  
करने की तो कौन कहे  
इन्हें सुनने का भी समय नहीं ।

खुश होकर अपने जीवन से  
धन्यभाग्य मनाते हैं;

खाकर जूठन सारा जीवन  
जीवित ही मर जाते हैं ।

### हंसक

पर देखा क्या कभी किसी ने  
दूर देश में अपना घर ?

### हंसराज

मैंने खुद अपनी आँखों से  
देखा है वह अपना घर ।  
बतलाने इन सबको यह मैं  
वापस आया इनके पास,  
पर बातें सुनकर मेरी ये  
करते हैं मेरा उपहास ।  
नहीं इसका है मुझको दुख;  
मूर्ख लोग ही इस दुनिया में  
कहते फिरते मुझको मूर्ख ।

सुन मुझे तू मेरी बात:  
तारकोल की मूरत ये  
पास बुलाने को आतुर,  
बाँध के रखकर रिश्तों में  
चिपटा लेने को आतुर ।  
एक तनिक सी गलती से  
गजराज है गिरता गड्ढे में  
लोभ, मोह के वशवर्त्ती हो  
हम सब फँसते फंदे में ।

कर निज पर विश्वास-भरोसा  
मन, डैना मजबूत बना ;  
बल, साहस, संकल्प लिए

जा, अपने घर को उड़ जा ।

### द्रष्टा

उड़ा हंस था आज यहाँ  
अनजान देश के पथ अनजाने ।

### वासना

### द्रष्टा

संध्या होने को आया था  
कमा तनिक सूरज का क्रोध;  
उसी समय दीखा इक धब्बा  
उठता उत्तर-पश्चिम ओर ।

### हंस

यह क्या आता मेरी ओर?  
पंछी नहीं, नहीं पहाड़,  
धूम्र नहीं, नहीं पठार ।  
हूँ कितना मैं श्वेत – धवल,  
पर कितना यह बदश्यामल  
फिर भी करता है क्यों यह  
आकर्षित मुझको अपनी ओर?

हो न हो, यह है घनश्याम;  
अंक लिए अंधड़, तूफान ।  
हंस परम ने मुझे कहा था  
रहने इससे ही सावधान ।

बचो हंस, नहीं तो तेरी  
निश्चित आई आज कयामत;  
छुप जल्दी से, जा धरती पर  
नहीं तो आई तेरी शामत

### द्रष्टा

शुरु किया था नीचे जाना  
तभी लगा इक ठंडा झोंका  
जले-तपे उन अंगों में  
छूती ठंडक प्राणों में ।

शीतल झोंका ना था वह,  
था वह फाँसी का फंदा।  
आकंठपूर्ण घट सुन्दर में  
मानो पर्दा हो झीना सा;  
दूध भरा हो ऊपर ऊपर  
नीचे विष से भरा हुआ ।  
दुग्धपान करते-करते  
चदरी दुर्बल वह टूटे ,  
गरल सुधा को करे एक  
सदा-सदा को अपने से ।

विषवनिता, मोहक, छुप-छुप  
वाणी मधुर, घर तन सुन्दर  
कालपाश में ज्यों जकड़े  
जग के सब बेचारों को ।

आग में अंगुली एक बार  
देता कोई है नादान,

था ऐसा ही मूरख हंस  
कुतूहली, उत्सुक, अनजान ।

### हंस

नहीं असंयत हुए जरा भी  
ठंडक थोड़ी पिऊँगा,  
कलाबाजियाँ खाकर हल्की  
धरती को मैं कूँगा ।  
कालसूर्य की गरमी ने मिल  
तप्त धरा के साथ आज  
ठंड देश के कुंदवर्ण को  
कितना दिया क्लेश-संताप।

नहीं देर तक, अल्पकाल ही  
अपने पंख पसारूँगा;  
आँधी अब भी दूर पड़ी है  
तन तब तक ठंडा लूँगा ।  
मान रहा गुरुदेव की बातें  
जोखिम नहीं उठाऊँगा;  
खतरे के आने तक निश्चित  
आश्रय को मैं भागूँगा ।

### द्रष्टा

किलक-किलक कर कूदा हंस  
लुत्फ उठाने मंदिर वात का;  
पर हर पल था सँभला कि  
फँस ना जाए अंधड़ में,  
झंझा और बवंडर में ।

नहीं पता पर उसको था:

सपने कितने नष्ट हुए  
पड़कर इन आवर्तों में,  
घूँघट डाले पवन मंद का  
झंझा आता जब जीवन में ।

कूदा कालमुखी कलहंस  
आवर्त विवर में अनजाने ही ।

### पतन

#### द्रष्टा

उड़ा हंस कला उड़न की  
कलरव करता कुहक-कुहक  
कर विज्ञापित शक्ति पंख की  
घिरा हवा में मादक-मोहक ।

बिन भूले ही भूला चुका था  
खतरे की वह परिभाषा:  
'सुगढ़, सलोनी, सूरत, काया  
नही तन्वंगी, सुरसा है,  
मुँह में जिसके घुसनेवाला  
कभी न जिन्दा आता हैं,  
जाकर ज्वालामुखी उदर  
बन राख वहीं रह जाता है,  
घुसना जिसमें सहज, सरल  
पर, राह न वापस पाता है।'

सुख, सौन्दर्य, मोह, अभिलाषा  
क्यों तेरा इतना हृदय कठोर?

आदर्शों के पथ में आ क्यों  
लहू-लुहान यूँ करते हो?  
धरकर काया रंग-बिरंगा  
सीधे-सादों को ग्रसते हो?  
प्रवृत्ति देना काम तुम्हारा  
क्यों अच्छों को पर डँसते हो?

नहीं दया, नहीं लाज-शरम,  
ममता नहीं, नहीं कोई धर्म;  
बना-बना बलि अच्छे का  
क्यों अट्टहास लगाते हो?  
बचना जिसको तुमसे होता,  
कर अपने को दुबला छोटा,  
छुपे बैठ, कहीं आश्रय ले  
तेरे भय से कंपित रहता ।  
जाने वही बनाया जिसने  
तुझे बनाया क्यों उसने ।  
काश! नहीं तू जन्मा होता ।

हंस बेचारा ।  
रस चखते ही मंदिर वात का  
मन की चाहत और बड़ी;  
बुझे हृदय से झपटा पर वह  
चढ़ते देख त्वरण झंझा की ।

देर बड़ी हो चुकी मगर थी,  
नहीं निकलना संभव था अब  
झंझा के आलिंगन से;  
अनावृत्त कर अपनी छाती  
रूप मिलन को घेरी थी ।

रूप? हूँह ।

था ना रूप, स्वरूप सलोना,  
तांडव था वह महाभयंकर ।  
आँधी नहीं, तूफान नहीं,  
प्रलय नहीं, था बड़वानल,  
अंधड़ का वह महाबवंडर ।

तमस तमस पर तमसाच्छादित  
घूर्णी पर घूर्णित घूर्णितवात  
उर्मित उर्मि पर उर्मि उर्मित,  
झंझा पर झंकृत झंझावात ।

भूत, प्रेत, दानव की बहनें  
डायन, जोगन और चुड़ैलें  
शक्ति लेकर कल की भी  
सर्वग्रासी बन निकली थीं ।  
कूद रही थीं धम से वे  
उछल रही थीं छम से वे  
भाग रही थीं, दौड़ रही थीं,  
आगे-पीछे करती एक ।  
छप्पर फोड़ डाली तोड़  
हँसती थीं वे हिनहिन करते ।

नृत्य चुड़ैलों का बीभत्स  
बेताल-ताल पर झनकित था;  
करती थीं मनोरंजन वे,  
पर जीवन प्राण गँवाता था ।

पड़ा हंस हाथों में उनकी  
कंदुक-क्रीड़ा शुरु हुई;  
लपक-झपक की,

झपट पकड़ की,  
खींचातानी शुरु हुई ।  
दीदी फेंकी बहना हाथ,  
बहना फेंकी दीदी हाथ,  
फिंका रहा था गेंद समान  
एक हाथ से दूजा हाथ ।  
ऊपर, नीचे, आगे, पीछे,  
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण,  
अभी धरा पर, अभी गगन में  
फिरकी सा था नाच रहा ।  
'मुझको देना, मुझको देना  
मेरी बारी, मेरी बारी,'  
चीख मचाई थीं वे बहना;  
गरज रही थीं, झगड़ रही थीं  
नहीं पाने पर गुस्से में वे  
पंखों को ही नोच रही थीं ।

हंस नहीं था गेंद एक ।  
निष्प्राण हुआ वह पल भर में;  
खेल खत्म हुआ बहनों का  
नहीं काम का पिचका गेंद ।  
शूर्पणखा, पूतना, ताड़का  
बहनें निकली फेंक उसे अब;  
खोज में अपने नए शिकार  
लाए मन में ना एक विकार ।

बना झंझा अब शांत बयार ।

श्वेत, सफेद, सुडौल, सुघड़  
काया, ग्रीवा, पक्ष, वक्ष  
था जिसका वह गिरा धरा पर

पक्षहीन, हो क्षत-विक्षत  
शायद आहत, निहत स्यात;  
रहा पड़ा वह पक्षराज ।

\*\*\*\*

## सुयोग

### बालक

मम्मी, मम्मी, देखो, देखो ।  
बगिया से मैं क्या लाया;  
चुनने जाकर अंधड़-अंबिया  
पक्षी कैसा हमने पाया ।

पंक-कीच में सना हुआ  
भद्दा कितना लगता है,  
नहीं पता है यह भी कि  
यह जिन्दा है या मुर्दा है ।

### द्रष्टा

झाड़-पोंछकर, सेंक-साँककर  
देख गौर से पंछी को;  
हँसकर बोली मातारानी  
रोते अपने बेटे को ।

### माता

बदसूरत ना पंछी यह  
पड़ा काल का फंदा है;

दूर देश का पथिक विहंगम  
नहीं मृतक, पर जिन्दा है ।  
देखो बेटे, धुक-धुक कैसे  
चलती साँसे धीरे-धीरे ।  
नहीं देर से अभी-अभी  
शक्ति वापस यह पाएगा ।

### हंस

हूँ मैं कौन? कहाँ से आया?  
हैं ये कौन? कहाँ मैं आया?  
लगती है अनजान जगह सी  
लगता निज अनजाना सा ।  
उठने का ना जी है करता,  
दुखती क्यों है मेरी काया?  
टीस हृदय में उठती क्यों?  
लगता मन क्यों खोया-खोया?  
क्यों पंखहीन? क्यों टूटे डैने?  
शक्तिहीन, क्यों दुर्बल इतना?  
इन सब मेरे मुखर प्रश्न के  
उत्तर सारे नीरव क्यों?

### द्रष्टा

पल जाता है पल मे ही,  
युग जाता है युग में ही  
निर्भर करता है मन पर कि  
बीतेगा पल युग समान, या  
युग बीतेगा पल समान ।

खंड विखंडित तन-मन धारे,  
व्यथा हृदय की उर में मारे,  
निज में निज को धरे, समेटे

नहीं कटता था समय हंस का  
पल लगता था युग समान ।

अपनी बीती भूले हंस  
भूल चुका था अपनी गाथा,  
लक्ष्य, दिशा व अपना पथ ।

तन का हो या मन का हो,  
कालगति हर कच्चे व्रण को  
भर देता है धीरे-धीरे;  
पर्दा ढँककर पीड़ा पर ।

नहीं हंस अपवाद एक ।  
पाकर शक्ति पैरों की वह  
चलना वापस सीख लिया,  
नहीं जानकर निज को भी  
बच्चों को अपना मान लिया ।  
खेल-दौड़ में देकर साथ  
अपना समय बिताता था;  
कर मनोरंजन बच्चों का  
मन अपना बहलाता था ।

कहीं किसी कोने में था  
स्वत्व-दर्द छुपा बैठा,  
नहीं जानकर कारण कोई  
रहा आस में कल की बैठा ।  
यूँ कटता था समय हंस का ।

## स्व

## द्रष्टा

धीरे-धीरे बातें फैली  
विहग जगत में हंसक की;  
कभी इकट्ठे, कभी अकेले  
आए उसका बहलाने जी ।

## बगुला

क्यों रहते मायूस, उदास?  
आओ चलते दोनों मिलकर,  
इकपैरी बन, पोखर जाकर  
आँखें मींच लगाते ध्यान;  
कहने जग को हम महान ।

## हंस

धन्य-धन्य हे योगीराज !  
धन्य तुम्हारा ध्यान !  
नीर जगत को धोखा देकर  
उल्लू सीधा करते आप,  
जाने जाकर जग-पाखंडी  
लाभ भला क्या पाते आप?  
ठगने जाकर दुनिया सारी  
ठगे व्यर्थ ही जाते आप !

संभव हो तो रखें याद  
'जीवन ना मौज मनाने का  
जग ना लूट मचाने का ।

पल-पल का, पर, लाभ उठा  
बनने और बनाने का ।'

करें क्षमा, छोड़ें मुझको  
मेरी किस्मत पर आप मुझे ।

### कोयल

आ मुझसे तू आकर मिल जा ।

दर्द हरण करने से उत्तम  
नहीं और कुछ श्रेय जगत में ।  
दर्द मुझे चाहे कितना हो  
करती हूँ मैं जग सेवा  
सुना-सुनाकर सा-रे-गा ।  
यश जग में तेरा फैलेगा  
अतिसुंदर संगम जब होगा  
स                    ' ' सीस शुभ्र सुकमौ

### हंस

ओ कोयल प्यारी,  
क्या कहने गीतों की तेरी ।  
बोली तेरी इतनी मीठी  
खुद भी मोहित होती है,  
खोकर मधुर सुरों में अपने  
अंडे ना से पाती है ।  
नहीं नष्ट करने को पल,  
कौओं को बहकाती है;  
अपने ही बच्चों का पोषण  
बिना मूल्य करवाती है ।  
नहीं मधुर ये शब्द हैं तेरे  
बस थोथी यह बोली है,  
डोल, नगाड़े जैसी तू तो  
अंदर खाली-खाली है ।  
शब्दजाल के पीछे छुप-छुप

जग को तू भरमाती है;  
नहीं बाहर, पर, अंदर से भी  
काली और कलूटी है।

मुझे छोड़ तू और कहीं जा ।

### कौआ

सर्वसही मैं त्यागी काक ।  
मैला, गंदा, कचरा खाकर  
साफ धरा को रखता हूँ;  
नहीं बातूनी; मिहनतवाला  
सेवाधर्म सिखाता हूँ ।

### हंस

तपः, त्याग की मूरत आप,  
पिछड़े जन के नेता आप,  
साम्यवाद स्वयं साक्षात् !

समस्त धरा की संपद में  
समदृष्टि हैं ले आते आप  
जो चीज जहाँ से संभव हो  
उठा वहीं से लाते आप ।  
भीख की रोटी; गहना दामी  
एक समान उड़ाते हैं;  
पड़ा देख मैला या मुर्दा  
काँ, काँ हाँक लगाते हैं ।  
बचा-छुपा रखते चीजों को  
पर त्यागी लोगों सा ही  
नहीं खोज खुद पाते हैं ।

तारीफ करें कितनी भी, पर



होगा वह तो बस सूना;  
पता नहीं फिर भी दूषित क्यों  
होते कहला 'धूर्त', 'सय ' ना

### चील

नहीं करता हूँ बात किसी से  
वंश के बाहर अपने मैं;  
देख तुझे, पर, आती करुणा  
चलो सिखाऊँ पौरुष मैं ।

### हंस

मार झपट्टा, करके ठंडा  
कष्ट प्राणी के करते दूर,  
नहीं जगत में आपसा कोई  
पास कहीं या दूर-दूर ।  
पर, पौरुष है आपकी शोभा,  
मुझ निर्बल पर कृपा करें;  
बढ़ती संख्या लघु करने का  
काम मुझे न जग का दें ।

### उल्लू

सुन पक्षराज! मैं निशाराज!  
दुख, दर्दभरी सुन तेरी गाथा  
तुझे करने अपना मैं आया ।

### हंस

शुक्रगुजार तहेदिल से, पर  
नहीं उल्लू बनने का मन;  
नहीं बना कुछ जीवन में तो  
आऊँगा मैं तेरी शरण ।

### द्रष्टा

मैना आई, तोता आया,  
आए गृध्र जो पक्षीराज;  
कंक, कबूतर, सारस आए  
नहीं हिला पर पक्षराज ।

### पक्षीगण

नहीं हमसा यह सीधा-सादा  
गर्वित, मूर्ख, घमंडी है;  
लगते सब जब इसको छोटा  
निश्चित खुद तब खोटा है ।

### हंस

स्व उसका उसको ही शोभित  
सच में जिसका जो है होता;  
कर प्रयत्न ना कर पाता है  
नहीं जिसका जो अपना होता;  
कौन है छोटा, कौन है खोटा  
नहीं समझ में कुछ भी आता ।  
हे स्रष्टा मेरे ।

आप ही मेरे अब रक्षक  
आप ही भाग्यविधाता हैं ।

### द्रष्टा

रक्षा स्व की कठिन जगत में  
नहीं हो कोई जब अपनों में ।

निज से टूटा, जग से छूटा  
पड़ा रहा बच्चों के संग

पड़ा रहा वह एक-अकेला ।

## बंधन

### बालक

हंस है अपना दुष्ट दुष्ट।

खेल दौड़ में शामिल हो यह  
उड़- उड़ आगे जाता है,  
लेकर मुँह में अँगुली सबका  
काट-काट सा लेता है ।

### माता

ना ना बेटे, ना कहते ऐसा  
सीधा-सादा, भोला-भाला,  
है अनाथ यह हंस बेचारा ।

पर शक्ति आती-सी लगती  
तन, मन टूटे डैनों में;  
छोड़ हमें यह उड़ ना जाए  
चल, डाल इसे दें पिंजर में ।

### द्रष्टा

हाल हुआ वही हंस का  
ऐसों का जो होता है;  
शक्ति बढ़ती अपनों से जब  
कैद कहीं हो जाता है ।

## हंस

मसल दिया क्यों चुटकी में ले  
जीवन मेरा, खुशियाँ मेरी?  
विष घोला रेचक, पूरक में  
क्यों आहत कर यूँ आजादी?  
भरने खुशियाँ तेरे दामन  
कत्ल किया निज खुशियोंका  
ढोया शव कंधों निज के  
अपनी उड़ान, उमंगों का ।  
रहना चाहा तेरे जैसा  
बांध स्वयं को भूतल पर  
नहीं पता खुद मुझको ही  
चहक-चहक क्यों उठते पर ।  
संग, संग रहने पल-पल  
मोड़ा मुँह मैं उड़न जगत से  
होम किया निज को मैंने  
बूँद-बूँद 'खुशियों' से ।

सहलाया, बहलाया मैं,  
पंख नहीं, दौड़ा पग पर;  
देखो फिर भी यहाँ आज  
पिंजर तक देकर मुझे जमीं  
कारा में सिमटा आसमाँ  
यूँ स्वत्वहरण किया मेरा ।

धिक, धिक मेरे नन्हे दोस्त।  
ठेल मुझे यूँ गह्वर में  
और डाल कर कारा में,  
सुर छीन हमारे कंठों की  
हास्य छीनकर होठों की,  
लेकर जीवन, देकर मृत्यु

पाई तुमने खुशी कौन सी?  
नया कलेवर, नूतन जीवन  
दिये मुझे बन मात-पिता  
पर जीवन ऐसा पाने से  
मरना ही कहीं श्रेयस था।

सच कहते हैं सब जग में –  
जो छोड़ स्वयं को देता है,  
जग छोड़ उसे भी देता है।  
छोड़ स्वयं को, अपना तुमको  
हुआ हथ्र यह आज हमारा।

### द्रष्टा

कृष्णपक्ष के क्षीण चाँद सा  
होते देखा मलिन हंस को  
घबराकर माता, बच्चों ने  
दिया संगी ला हंसक को।  
साथ दिया अब दुखी हंस का  
कू-कू, कलरव करती चिड़िया  
बत्तख, मैना, बुलबुल, तोता।  
पर बचपन से उन पंछी ने  
नहीं आसमाँ छुआ था।

### तोता

आखिर क्या है पीड़ा तेरी  
रहते क्यों तुम यूँ बिन्दास?

### हंस

जन्म हुआ क्यों आखिर मेरा?  
चुगता रहता क्यों दाना?

है क्या कोई अर्थ जगत में  
या जग में है सब बेगाना?  
पर एक बात तो हर सब जाने  
लाचारों को पीड़ा देना,  
बढ़ते देखे जभी किसी को  
खींच धरा पर ले आना।

कंच, किरिच बिच रहते-रहते  
कहते हीरा को ऐसा ही;  
धुनते-धुनते कली कपास का  
कहते गुलाब है ऐसा ही।  
आज बंद सलाखों में मैं-  
कहते वे क्यों मैं उड़ता हूँ,  
क्यों चोंच से अँगुली धरता हूँ?

पर बोलो दोष कहाँ है मेरा  
नियति से जब बंधा हुआ?

### मैना

श्याम निशा में दीप प्रभा की  
ज्योत प्रीत की लाँगे,  
जैसे भी हो मिलकर हमसब  
अपना तुम्हें बनाएँगे।

### हंस

प्रेम, प्रीति, या प्यार, दोस्ती  
जग में सबके सब बेकार।  
जग ना जाने सच्चा प्यार  
करता पूजा या व्यापार।

करते कृपा, दया दिखाते  
भीख यहाँ हैं लेते, देते  
बंध के रहते, बाँध के रखते  
हर छटाँक का सेर माँगते ।  
नहीं जगत में बंधु कोई,  
नहीं जगत में अपना कोई ।

### मैना

आओ मिलकर बाँटें दर्द  
इक दूजे की थामे बाँह ।  
होने दोनो एक यहाँ ।

### हंस

दो एकक का होना एक  
अमिट प्रेम को कहते हैं;  
तन, मन, प्राण जहाँ पर दो  
नहीं एक हो सकते हैं ।  
जड़ का जड़ से होना एक  
नहीं धरा पर संभव है,  
चकती, पुच्छी, बन पैबंद  
इक दूजे का रहता है ।

प्यार जगत में बनकर गोंद  
चिप्पी यहाँ सटाता है,  
जोर लगाकर थोड़ा देखो  
जोड़ अलग हो जाता है ।

### मैना

व्यथा विदीर्ण हृदय कि तेरी  
चीर हमें भी देती है,  
कंपन तेरे हृदय, भाव का

कंप हमें भी देता है ।  
बोल, हंस ओ मेरे प्यारे  
है क्या कोई बचा उपाय?

### हंस

मौत भली ऐसे जीवन से  
घुट घुट मरना पड़ता जब  
साँस विषैली लेने से तो  
साँस रोकना अच्छा तब ।  
निज से निज जब बिघटित होता,  
होता मन तब मन भर का  
तन पर तन तब भारी होता  
मुर्दा जैसे मुर्दा ढोता ।  
जीवन-चाह छुपी बैठी  
अंतस्तल के कोने में  
रोक रही बल आने से  
आत्महनन करने की मुझमें ।  
नहीं जीवित रह सकता ऐसे  
नहीं मौत भी आती है,  
नहीं समझ में आता कुछ भी  
करना अब क्या वाजिब है ।

### स्नेह

### द्रष्टा

बढ़ती संख्या, कमती दूरी  
बंधी, कसी दीवारों में  
है ताप बढ़ाती निश्चित ही ।  
ताप तोड़ता, ताप जोड़ता;  
बात ही क्या लोहे, शीशे की

करता ऐसा रिश्तों से भी ।

मैना, तोता का सामीप्य  
उष्मा लाया हंस-हृदय में  
नहीं सायुज्य, सारूप्य नहीं  
पर साम भाव का ले आया ।  
हँसते, गाते थे मिलकर सब  
मैना, मराल अब साथ-साथ  
करते हल्का एक अपर का  
जीवन अबतक जो दुर्वाह ।

बिन बूझे ही हृदय हंस का  
मैना थी खुश आपे-बाहर ।  
कहा एक दिन मैना ने :  
'कितने प्यारे हंस हमारे  
जाती तुझपर वार वार ।  
मन मेरा था सूखा चावल  
दूध तुम्हारा प्यारा प्यार;  
बन आग तुम्हारा संग यहाँ  
बनी मधुर मैं पायस खीरा।  
बोलो, कैसे कर्ज चुकाऊँ?  
मेरे दिल पर तेरे मन का ।'

### हंस

मेरे हितू, मेरे हमदम ।  
पीयूषधार की आशा तुमसे  
विष बूँद कभी तुम मत देना,  
फूल नहीं देना, पर, मेरे  
राह में रोड़े मत देना ।  
बोझ हमारा मत लेना, पर  
बोझ हमारा मत बनना;

छाँव मुझे तुम मत देना, पर  
ताप-वृष्टि तुम मत देना ।  
मधुर हास्य की आशा तुमसे  
धार अश्रु की मत देना;  
नहीं दर्द हर सकती हो तो  
जख्म नए तुम मत देना ।  
मेरे हितू, मेरे हमदम  
फूल नहीं देना, पर, मेरे  
राह में रोड़े मत देना ।

## योग

### द्रष्टा

दैव कहो या भाग्य कहो  
हुआ एकदिन यूँ अचानक ।

निर्मल, निर्घन, नील गगन  
बाल अरुण था पीत सघन;  
द्वन्द्वहीन, निर्भय, निस्संग  
आयास रहित बिखेरे पंख  
था उड़ता नभ बिच एक हंस ।  
श्रुति-कपाट, ना दृग-द्वारों से  
त्वक्, नासिका, ना जिह्वा, मन से;  
नहीं जानकर, अनजाने ही  
उन्मेष हुआ विद्युत संकेत  
कर उन्मीलित हृदय हंस का ।  
मिल शोणित धारा से अशनि  
चिह्न मिटा अरसों की रजनी;

कूप-कूप कर उठा निनाद  
नस-धमनी उठा अब गूँज गूँज  
हंस हृदय का हर्षपुंज ।

उद्वेलित होता हृदि तडाग जब  
होकर झंझित भाववेग तब  
अंग तटों की मर्यादा से  
नहीं पाकर पर, कोई छूट  
मन-वाणी से पड़ता फूट ।

### हंस

सुन-सुन बुलबुल, बत्तख प्यारे  
मैना प्यारी, तोता प्यारे !

देखो मेरे वंशज को वह  
उड़ता दूर गगन के गोद  
देख जिसे बस क्षण में ही  
हृत रजनी में हुआ भोर ।  
मन, विवेक, हृदि पंकज पर  
कालिख थी जो परत-परत  
तमस तामस तमिस्रा वह  
छिटकी जाकर दूर छिटक ।  
पाकर निर्मल पत्थर संग  
पंक भरा ज्यों दूषित नीर  
होता फिर से स्वच्छ, पवित्र ।  
ज्ञान मुझे लौटा है मेरा  
गति, जीवन, दिशा, लक्ष्य का;  
नहीं मुझे अब बंधकर रहना  
नहीं मुझे अब जीवित मरना ।

मुझे पहुँचना निज निकेत

पश्चात् हिमाद्रि शुभ्र देश ।  
बनो सहाय, ओ मेरे हितू  
मुझे निकलने पिंजर से;  
मुक्त श्वास लेने ना केवल  
पूरा करने, पर, मेरा ध्येय ।  
एक-एक कर तोड़ूँगा मैं  
काल-काष्ठ-सलाखा को,  
शक्ति लगाकर पंख, पाँव की  
उड़ जाऊँगा अपने देश ।

### मैना

कैसी बातें करते नादाँ  
छोड़ यहाँ है गेह कहाँ?  
आजादी के देख नाम पर  
बन आवारा फुदक रहे हैं  
पंछी कैसे इस जग के ।

### हंस

जन्म हुआ श्रृंखल में तेरा  
और पली तू कारा में,  
नहीं कदापि संभव कि तू  
करे बात आजादी की ।  
रहो ऐसे ही पड़ी यहाँ पर  
यही कर्म, है भाग्य यह तेरा;  
ना जीवन, पर, ऐसा मेरा  
छोड़ मुझे, तू जाने दे ।

### द्रष्टा

अंग-अंग की छाई उमंग  
मन का लेकर बल ऊँचा,

नष्ट किए ना पल भर भी अब  
लगा तोड़ने वह खाँचा ।

### तोता

आश्रय, अन्न लिए तुम जिनका  
छोड़ उन्हे क्यों जाते हो?  
कर ऐसा क्या दुनिया में तुम  
नहीं कृतघ्न कहलाओगे?

### हंस

नहीं गलत तुम तोता पंडित  
पर, सोच जरा सा बस तनिक ।  
नहीं चुगता तो मारा जाता  
नहीं काम की होती मौत;  
नहीं निकलूँ मैं अगर यहाँ से  
नहीं काम का होगा जीवन ।  
नहीं चाहता मृत्यु चुंबन  
नहीं चाहता यह जीवन  
पाना है जब निज स्वरूप  
जाना है जब निज निकेत ।  
जो जीवन का मर्म जानता  
बस इतना ही निश्चित करता  
तोड़ के बंधन, छोड़ के बन्धु  
तज कृतज्ञता, फेंक अज्ञता  
एक भाव ले, एक दिशा ले  
चिह्नित पथ पर पग देता ।

### तोता

निश्चित आश्रय को छोड़ भला  
भाग रहे अनिश्चित ओर,  
क्या मिलेगा पहुँच वहाँ पर

कहते जिसको 'अपना ठौर'?

### हंस

कैसे बोलूँ, क्या पाऊँगा  
वहाँ पहुँच, जो घर अपना,  
पर कहते सब सच यह की  
टेढ़ी खीर इसे समझना ।  
और अगर सच पूछो तो  
नहीं पता है मुझको भी कि  
पहुँचूँगा मैं निज निकेत, या  
आऊँगा पथ में खेत ।  
पर जानो मिल निश्चित सब –  
हर्ष पहुँचने का है जितना;  
उतना ही होता आनन्द  
पथ पर चलते रहने का ।

दिशाहीन जीवन जीने से  
श्रेयस निश्चित आगे बढ़ना  
मिले सफलता, मिले मौत  
पथ पर जो, चिह्नित अनजाना ।

## मुक्ति

### द्रष्टा

मैना के थे मूक अधर,  
अश्रु सिंचित नैन मुखर ।

### मैना

कैसे रहुँगी बिन तेरे मैं  
रोती अपने जले करम पर ।

देखो कैसे अनजाने ही  
चलता था दिल धक धक मेरा  
तेरे दिल के साथ साथ ।  
देख तुझे, ना छुए ही  
फट पड़ता था हिय-हिलोर  
हिय उठता था हुलस-हुलस ।  
छोड़ हमें तुम जाओगे,  
नहीं सोच मैं पाती हूँ,  
उठती काया काँप काँप ।  
पाती ना तो दुख न होता  
पर, पाकर खोना देता है  
टूटे दिल में टीस-टीस ।  
नहीं रोक सकती मैं जानूँ  
इसीलिए तो आँसू स्याह  
बहते बरबस फूट-फूट ।

### हंस

बंधन लोहे या सोने का  
नहीं तोड़ना कठिन जगत में  
बंध आँसू के श्रृंखल में, पर  
छटपट करता जीव जगत में ।  
करता विनती, मैं मनुहार  
मत फिसला मुझको आँसू में  
सुख, संग जरा सी पाने को  
ठेल मुझे ना दोजख में ।

### मैना

मेरे दुख हैं मेरे दुख ।

प्यार किया था हमने तुमको  
नहीं किए कुछ प्रत्याशा  
रोते, बिलखते, करते छटपट  
पूरी करेंगे तेरी आशा ।  
पर, सोचो फिर से एकबार  
रुक ना सकते क्या मेरे साथ ?

### हंस

करने पूरा सपना अपना  
छोड़ा मैंने साथी-संगी  
छोड़ा था निज घर संबंधी ।  
भ्रष्ट पथिक का मूल्य ही क्या !  
पथ पर टूटे पहिए जैसा,  
बिन मभुर मभु के जैसा !  
बोलो, ठहरूँ फिर मैं कैसे ?

### द्रष्टा

सायास स्वेद के टपका बिन्दु  
सँभल-सँभल, विरल चेष्ट से  
रहा तोड़ता निज बंधन  
जोड़ निशा को संग दिवा के ।  
क्षुधा, पिपासा, निद्रा, तन्द्रा  
त्याग हंस को किए पलायन  
आश्रित होने भूमंडल में  
कहीं किसी के भोग-निकेतन ।  
कंधों पर बैठा कोई एक  
झटका मन से राग-विराग  
अलाप रहा बस एक राग  
चल भाग यहाँ से, भाग, भाग ।  
श्रम-सिंचित मूलें मुक्ति की  
आज चली अब पुष्पित होने



निस्पंद निशा हुई निःशेष  
राह दिया जब पिंजड़ ने ।

शिरा निकला, निकला पंख  
निकला झटके दे हंस-कंध;  
तन-मन की गुलामी टूटी  
आगे बड़ी अब आजादी ।

मुक्त वात, उन्मुक्त प्रकाश  
भर शक्ति सीने, साँसों में;  
कर दी विस्मृत शक्ति क्षीण  
थी जो अंगों, प्राणों में ।

निःश्वास मुक्ति का भरने को  
हर मूल्य धरा पर हल्का है,  
आनन्द घना चिति शक्ति का  
जहाँ पर पाना दुर्लभ है ।  
निकले टूटे पिंजर से अब  
उड़ बैठा जा छप्पर पर  
पूर्ण नजर से देखा उसने  
टूटे अपने कारा को ।

### मैना

नहीं बंधु क्या याद करोगे  
बीते दिन हम सबके साथ;  
निकल यहाँ से भूलोगे क्या  
हम भूले-बिसरों की बात?  
नहीं भूल सकेंगे पर हम  
तेरा हँसना, गाना तेरा;  
याद तुम्हारी आएगी जब  
रो लेंगे बस थोड़ा सा ।

याद अगर हम आएँ तुमको  
हँसी होंठ पे ले आना  
नहीं कदापि संभव तुमसे  
आँसू बूँदें यूँ टपकाना ।

हो संभव तो आना वापस  
मेरे बंधु, मेरे पास ।

### हंस

गुजर गए जिन राहों से  
क्या लेना अब उन राहों से?  
ले जाती है यह राह जिधर  
बस उसपर है रहना चलते ।  
झर-झर झरते झरने देखे  
शांत सुरों की सरिता देखी  
देखा दर्पित कभी शुभ्र शिखर  
मेघों की आँख मिचौनी देखी ।  
खिले बहारों को देखा मैं  
देखे रोते पतझड़ को  
झंझा के करतल पर देखा  
नाच मचाते लहरों को ।  
अंधे अंधड़ को देखा मैं  
श्रृंखल देखे पैरों में  
आलिंगन भू-नभ का देखा  
कारा बीच सलाखों में ।  
पता नहीं मैं कहाँ खड़ा हूँ  
दिखती बस यह लंबी राह  
वक्त कहाँ है, शक्ति कहाँ,  
सोचें अब बीतों की बात ?  
यही धर्म है, यही कर्म है  
युक्ति यही, यही बस न्याय;

भूले छूटे राहों को, बढ़  
जाती जिधर बलखाती राह ।

चल बनने को राजहंस  
था अब तक जो महज हंस ।

बोलो? गुजर गए जिन राहों से  
क्या लेना अब उन राहों से

नीरव, निश्चल, नभ श्यामल जब  
उड़ा हंस उन्मुक्त गगन ।

### द्रष्टा

देखा उसने अंतिम बार  
थे अब तक जो उनके साथ  
उड़ा धीर फिर दृढ़ पक्षों से;

\*\*\*\*\*